Four Year Under Graduate Programme (FYUGP)

As per provisions of NEP-2020

Vinoba Bhave University, Hazaribag

Subject- Political Science

Major-01

Indian Constitution

Model Question with Answer

अति लघुउत्तरीय प्रश्न–

1. भारतीय संविधान की प्रस्तावना में क्या–क्या शब्द जोड़े गये?

उत्तर– भारतीय संविधान की प्रस्तावना में 42वें संविधान संशोधन के तहत समाजवादी, पंथनिरपेक्ष और अखण्डता शब्द जोड़े गये।

2. भारतीय संविधान के किस भाग में गांधीवादी विचारधारा का समावेश दिखता है?

उत्तर– भारतीय संविधान के राज्य के नीति निदेशक तत्व के भाग में गांधीवादी विचारधारा का समावेश दिखता है।

3. बंदी प्रत्यक्षीकरण से आप क्या समझते हैं?

उत्तर– बंदी प्रत्यक्षीकरण मौलिक अधिकार के संरक्षण के लिए अनुच्छेद 32 में प्रदत्त एक रिट है जिसके अंतर्गत किसी भी व्यक्ति को अगर बंदी बनाया जाता है तो उसे 24 घंटे के अंदर निकटतम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रावधान है।

4. राष्ट्रपति के निर्वाचक मण्डल के सदस्य कौन–कौन होते हैं?

उत्तर– राष्ट्रपति के निर्वाचक मण्डल में भारतीय संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य तथा राज्य के विधानसभा के निर्वाचित सदस्य सदस्य सम्मिलित होते हैं।

5. झारखण्ड के प्रथम मुख्यमंत्री कौन थे?

उत्तर– बाबूलाल मराण्डी झारखण्ड के प्रथम मुख्यमंत्री थे।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय संविधान की प्रस्तावना के महत्व को लिखें।

भूमिका (Introduction) संविधान की उद्देशिका मूल आदर्शों, आधारभूत सिद्धान्तों और दार्शनिक अभिधारणाओं को मुख्यतः नैतिक रूप में व्यक्त करती हैं। यह राजनैतिक व्यवस्था के अभीष्ट दिशा का सूचक है। संस्थाओं, पदों और कार्यविधियों के विस्तार में इन आदर्शों पर सर्वाधिक ध्यान दिया जाता है। यह संवैधानिक प्रावधानों को औचित्य प्रदान करती है। उद्देशिका किसी भी देश के शासन प्रणाली उसकी व्यवस्था के बारे में आसानी से समझा और जाना जा सकता है। उद्देशिका संविधान का सार संग्रह है। सर्वप्रथम अमेरिकी संविधान में उद्देशिका को सम्मिलित किया गया था।

प्रख्यात न्यायविद् और संविधान विशेषज्ञ एन0 ए0 पालकीवाला ने उद्देशिका को संविधान का परिचय पत्र कहा है। सर अल्लादि कृष्णस्वामी अययर– संविधान की उद्देशिका हमारे दीर्घकालीन सपनों का विचार है। के0 एम0 मुंशी– उद्देशिका हमारी संप्रभु लोकतांत्रिक गणराज्य का भविष्यफल है। एम0 हिदायतुल्ला के अनुसार उद्देशिका हमारे संविधान की आत्मा है। डॉ0 सुभाष कश्यप ने ठीक ही कहा है कि उद्देशिका में निहित पावन आदर्श हमारे राष्ट्रीय आदर्श हैं और जहाँ वह एक ओर हमें अपने गौरवमयी अतीत से जोड़ते हैं वहीं भविष्य की आकांक्षा को भी संजोए हुए है।

उद्देशिका में उस आधारभूत दर्शन और राजनीतिक, धार्मिक व नैतिक मौलिक मूल्यों का उल्लेख है जो हमारे संविधान के आधार हैं। इसमें संविधान सभा की महान और आदर्श सोच उल्लिखित है।

द्वितीय, न्यायमूर्ति हिदायतुल्ला ने प्रस्तावना संविधान निर्माताओं के मन की कुंजी है, जहां अस्पष्ट शब्द पाए जाए या उनका अर्थ स्पष्ट न हो, वहां संविधान निर्माताओं के आशय को समझने के लिए और उनकी सही व्याख्या करने के लिए प्रस्तावना सहायक हो सकती है। तृतीय, संविधान में जिस बंधुता की बात कही गयी है वह राष्ट्र की सीमा तक ही बंधी हुई नहीं है। वह उससे बाहर जाकर वसुधैव कुटुम्बकम के उंचे आदर्श तक पहुचने के लिए है। चतुर्थ, ब्रिटीश सरकार के अधिनियम के तहत तथा संविधान निर्मात्री सभा का प्रत्यक्ष चुनाव के द्वारा निर्मित नहीं होने के कारण कुछ विचारक उसे लोकतांत्रिक नहीं मानते हैं, परंतु संविधान सभा में आपसी निर्णय और सहमति के सिद्धान्त और भारत के लोगों के द्वारा किये गये अधिनियमन और आत्मार्पण ने इसे लोकतांत्रिक सिद्ध किया है।

पंचम, राष्ट्रमंडल की सदस्यता बने रहने के कारण प्रभुत्वासंपन्नता पर कई विचारकों का मतभेद हैं। राष्ट्रमंडल की सदस्यता संप्रभुता के द्वारा लिया गया फैसला है, जिसे नेहरू के शब्दों में नया राष्ट्रमंडल स्वेच्छा से किया गया एक करार है, जिसे किसी भी समय स्वेच्छा से समाप्त किया जा सकता है।

2. राष्ट्रपति की आपातकालीन शक्तियों का वर्णन करें।

भारतीय संविधान में राज्य के नीति–निर्देशक सिद्धान्त का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। राज्य के नीति–निर्देशक तत्व वह सिद्धान्त है, जो कार्यपालिका और व्यवस्थापिका को ऊँचे आदर्श प्राप्त करने के लिए दिये गये हैं। यथार्थ में संविधान की प्रस्तावना में जिन आदर्शों एवं उद्देश्यों को स्थान दिया गया है, उन्हें व्यावहारिक रूप प्रदान करने के लिए इन तत्वों का समावेश संविधान में किया गया है।

संविधान के अनुच्छेद 37 में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि इन उपबंधो को किसी भी न्यायालय में बाध्यता नहीं दी जाएगी किन्तु फिर भी राज्य के प्रशासन के लिए ये मुलभूत माने जायेगे और राज्य का यह कर्तव्य होगा कि विधि निर्माण के समय वह इन्हें मूलभूत माने। वस्तुतः नीति –निर्देशक सिद्धांत प्रजातंत्रात्मक भारत का शिलान्यास करते हैं और जब भारत सरकार इन्हें कार्यस्वरूप में परिणत करेगी तो भारत एक सच्चा लोककल्याणकारी राज्य कहला सकेगा।

भारतीय संविधान की इस अनोखी विशेषता को आयरलैण्ड के संविधान (1937 ई0) से प्रेरणा ग्रहणकर अपनाया गया है। भारतीय संविधान के भाग–चार में अनु0 36 से लेकर अनु0 51 तक राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों का उल्लेख किया गया है।

राज्य के नीति–निर्देशक सिद्धान्त का उद्देश्य कल्याणकारी राज्य की स्थापना है। विभिन्न विद्वानों ने इस संबंध में अपना–अपना मत दिये हैं–

डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद के अनुसार राज्य के नीति–निर्देशक तत्वों का उद्देश्य जनता के कल्याण को प्रोत्साहित करने वाली सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना है। दुर्गा दास बसु के अनुसार अधिकांश निर्देशों का ध्येय आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र स्थापित करना है, जिसका संकल्प उद्देशिका से लिया गया है। जेनिंग्स के अनुसार भारतीय संविधान का यह

भाग फेबियन समाजवाद की ही स्थापना करता है जिसमें से समाजवाद को निकाल दिया गया है। डॉ पायली के अनुसार निदेशक तत्व भारतीय प्रशासकों के आचरण के सिद्धांत हैं। इस प्रकार ये नागरिकों के प्रति राज्य के सकारात्मक दायित्व के द्योतक हैं। संविधान की प्रस्तावना में जिन आदर्शों के प्राप्ति की इच्छा प्रकट की गयी है, ये उन आदर्शों की ओर बढ़ने के लिए पथ प्रदर्शन का कार्य करते हैं।

मौलिक अधिकार और राज्य के नीति निदेशक तत्व के बीच अंतर

मूल अधिकार और नीति निदेशक तत्व दोनों भारतीय प्रजातंत्र के दो आधार स्तंभ है। दोनों के माध्यम से संविधान के दर्शन को व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया गया है। दोनों के उद्देश्य समान हैं– आर्थिक एवं सामाजिक न्याय पर आधारित समाज का निर्माण करना। फिर भी दोनों के बीच भारी अंतर व्याप्त है, जिसकी चर्चा निम्न प्रकार से की जा सकती है।

प्रथम, मौलिक अधिकार न्यायालय में वाद योग्य है, नीति निदेशक सिद्धान्त न्यायालय में वाद योग्य नहीं है।

द्वितीय, मौलिक अधिकार के पीछे न्यायपालिका की शक्ति है जबकि नीति निर्देशक तत्व के पीछे जनमत की शक्ति है।

तृतीय, मौलिक अधिकार की प्रकृति अधिकांशतः नकारात्मक है जबकि नीति निदेशक सिद्धान्त की प्रकृति सकारात्मक है।

चतुर्थ, मौलिक अधिकारो पर युक्ति युक्त प्रतिबंध लगाये जा सकते हैं ये सार्वभौम नहीं होते। जबकि नीति निदेशक तत्व प्रतिबंधों से मुक्त होते हैं।

पंचम, मौलिक अधिकार व्यक्तिनिष्ठ है यह मुख्यतः नागरिकों के लिए है परन्तु नीति निर्देशक सिद्धान्त राज्यों के लिए निर्देश है।

षष्ठम, मौलिक अधिकारों में राजनीतिक लोकतंत्र का आदर्श निहित है, जबकि नीति निदेशक तत्व में आर्थिक लोकतंत्र का आदर्श।

सप्तम, मौलिक अधिकार राज्य की शक्ति की सीमाएं बांधते हैं नीति निर्देशक तत्व राज्यों को कार्य करने की प्रेरणा देते हैं।

अष्टम, मौलिक अधिकारों का क्षेत्र राष्ट्रीय स्तर तक ही है परन्तु निर्देशक तत्वों का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व है।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

भारतीय संविधान की प्रमुख विशेषताओं की विवेचना करें।

Discuss the salient features of the Indian Constitution.

भारतीय संविधान भारत की सर्वोच्च विधि और विस्तृत कानूनी दस्तावेज है। अन्य सभी विधियां भारतीय संविधान के अधीन होती है। यह शासन व्यवस्था को आधार प्रदान करता है। वर्तमान में भारतीय संविधान में कुल 395 अनुच्छेद, 25 भाग और 12 अनुसूचियां हैं। भारतीय संविधान में विभिन्न राजनीतिक दर्शन, नागरिकों के मूल अधिकार, नागरिकों के मूल कर्त्तव्य के अलावा विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों का विभाजन इत्यादि अनके प्रावधानों को शामिल किया गया है। इसमें केन्द्र सरकार और राज्य सरकार के मध्य विषयों का विभाजन भी किया गया है ताकि इन दोनों के बीच उत्पन्न होनेवाले मतभेदों को न्यूनतम किया जा सके। भारतीय संविधान एक ऐसा गुणवत्तापरक दस्तावेज है, जो अपने आप में विभिन्न विशेषताएं समेटे हुए है।

भारतीय संविधान की विशेषताएँ भारतीय संविधान की विशेषताएँ निम्नलिखित है–

1. लिखित और विशाल संविधान– भारतीय संविधान एक लिखित संविधान है। भारत के संविधान को लिखने के लिए एक समर्पित संविधान सभा का गठन किया गया था, जिसका कार्य मुख्य रूप से आपसी विचार विमर्श के माध्यम से भारत का संविधान लिखना था। कई देशों में संविधान तो होता है लेकिन उस संविधान को लिखित संविधान नहीं कहा जा सकता है। उदाहरण के लिए ब्रिटेन में संविधान तो है, लेकिन वह लिखित संविधान नहीं है। इसका अर्थ यह है कि ब्रिटीश संविधान को लिखने के लिए विधिवत तरीके से किसी संविधान सभा का गठन नहीं हुआ था, बल्कि विभिन्न परंपराओं, न्यायिक निर्णयों और संसद के द्वारा पारित कानूनों के माध्यम से वहां का संविधान निर्मित हुआ है। इसलिए ब्रिटने के संविधान को अलिखित संविधान कहा जाता है। इसके साथ यह एक अत्यंत विशाल संविधान है। डॉ0 आइवर जेनिंग्ज के शब्दों में भारतीय संविधान विश्व का सर्वाधिक व्यापक संविधान है।

2. संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न, लोकतांत्रिक गणराज्य– संविधान की प्रस्तावना में स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि भारत एक संपूर्ण प्रभुत्व–संपन्न, लोकतांत्रिक गणराज्य है। संपूर्ण प्रभुत्व–संपन्न का अर्थ यह है कि आंतरिक और बाहरी दृष्टि से भारत किसी भी प्रकार का निर्णय लेने में

स्वतंत्र है, इसपर किसी प्रकार की बाध्यकारी शक्ति कार्य नहीं कर सकती है। भारत एक लोकतांत्रिक राज्य है अर्थात् भारत में राजसत्ता जनता में निहित है जनता को अपने प्रतिनिधि निर्वाचित करने का अधिकार होगा। भारत एक गणराज्य है। भारतीय राज्य का गणतंत्रात्मक स्वरूप यह स्थापित करती है कि भारत राज्य का सर्वोच्च अधिकारी वंशक्रमानुगत राजा न होकर भारतीय जनता द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित राष्ट्रपति है।

3. लचीलेपन और कठोरता का मिश्रण– भारतीय संविधान के लचीले होने का अर्थ यह है कि भारतीय संविधान के कुछ प्रावधान ऐसे हैं, जिन्हें भारतीय संसद साधारण बहुमत के माध्यम से संशोधित कर सकती है। उदाहरण के लिए, राज्यों के नाम, उनकी सीमा इत्यादि में संशोधन भारतीय संसद साधारण बहुमत के माध्यम से ही कर सकती है, जबकि भारतीय संविधान के कठोर होने का अर्थ यह है कि इस संविधान के कुछ ऐसे प्रावधान भी हैं, जिन्हें संशोधित करना भारतीय संसद के लिए आसान नहीं होता है। इन प्रावधानों के लिए न सिर्फ संसद के दोनों सदनों में विशेष बहुमत की आवश्यकता होती है, बल्कि देश के आधे राज्यों के विधान मंडल के समर्थन की आवश्यकता भी होती है। देश की संघीय व्यवस्था से संबंधित तमाम प्रावधान इसी प्रक्रिया के माध्यम से संशोधित किए जा सकते हैं। इस प्रकार भारतीय संविधान लचीलेपन और कठोरता का संदुर मिश्रण है।

4. संघात्मक और एकात्मकता का मिश्रण– भारतीय संविधान संघात्मक व्यवस्था और एकात्मक व्यवस्था दोनों का एक सुंदर मिश्रण है। भारतीय संविधान को संघात्मक संविधान इस आधार पर कहा जाता है कि यह एक लिखित संविधान है, इसमें सर्वोच्च व स्वतंत्र न्यायपालिका का प्रावधान किया गया है तथा इसमें केन्द्र व राज्यों के मध्य शक्तियों का स्पष्ट विभाजन किया गया है। जबकि भारतीय संविधान एकात्मक व्यवस्थाओं को भी समेटे हुए है, जो आपातकाल संबंधी प्रावधानों, केन्द्र सरकार द्वारा राज्यों में राज्यपालों की नियुक्तियों, वित्तीय प्रणाली पर केन्द्र सरकार के प्रभावी नियंत्रण इत्यादि के माध्यम से परिलक्षित होती है।

5. समाजवादी और पंथनिरपेक्ष राज्य– भारत में समाजवाद को राज्य दर्शन के रूप में स्वीकार किया गया है। 42वें संविधान संशोधन द्वारा प्रस्तावना में भारत को समाजवादी राज्य घोषित किया गया है। भारत को पंथ निरपेक्ष राज्य घोषित किया गया है। इसका तात्पर्य है कि राज्य की दृष्टि में सभी धर्म समान है और राज्य के द्वारा विभिन्न धर्मावलंबियों में कोई भेदभाव

नहीं किया जाएगा। पंथनिरपेक्ष राज्य धर्म विरोधी नहीं होता और न ही धर्म के प्रति उदासीन ही रहता है, वरन उसके द्वारा धार्मिक मामलों में तटस्थता की नीति को अपनाया जाता है।

6. एकल नागरिकता– भारतीय संविधान भारत के नागरिकों के लिए एकल नागरिकता निर्धारित करता है। इसका अर्थ यह है कि भारत का नागरिक सिर्फ भारत का ही नागरिक होता है, वह किसी भी अन्य देश का नागरिक नहीं हो सकता है। यदि कोई भारतीय नागरिक किसी अन्य देश का नागरिकता ग्रहण करता है, तो जिस समय वह अन्य देश की नागरिकता ग्रहण करता है, ठीक उसी समय से वह भारत का नागरिक नहीं रहता है। इसके अलावा, एकल नागरिकता का एक अर्थ यह भी है कि भारत का नागरिक सिर्फ भारत का ही नागरिक होता है, वह किसी प्रांत का नागरिक नहीं होता है। यानी घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय दोनों ही स्तर पर भारत में एकल नागरिकता को स्वीकार किया गया है।

7. संसदीय व्यवस्था– भारतीय संविधान में शासन की संसदीय प्रणाली को स्वीकार किया गया है। इसका अर्थ है कि भारत में मंत्रिपरिषद विधानमंडल के प्रति उतरदायी होती है। इसके अलावा सरकार तब तक ही अपना अस्तित्व बनाए रखती है, जब तक वह लोकसभा में अपना बहुमत रखती है। जिस क्षण सरकार लोकसभा में बहुमत खो देती है, उसी क्षण सरकार अपना अस्तित्व खो देती है। यानी सरकार को अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए लोकसभा में साधारण बहुमत की आवश्यकता होती है और किसी असमंजस की स्थिति में विपक्ष के द्वारा सरकार के विरूद्ध अविश्वास प्रस्ताव लाया जा सकता है। यदि अविश्वास प्रस्ताव पारित हो जाता है तो सरकार को अनिवार्य रूप से इस्तीफा देना होता है।

8. मौलिक अधिकार और राज्य के नीति निदेशक तत्व– भारत के संविधान में अमेरिका से प्रभावित होकर मौलिक अधिकार को समाहित किया गया है, जिसका उद्देश्य सरकार अथवा मंत्रीमण्डल को मनमानी करने से रोकना और सभी नागरिकों को सर्वांगीण विकास का अवसर उपलब्ध कराना है। भारत के संविधान में भाग 3 में नागरिकों के मूल अधिकारों का उल्लेख किया गया है। इसके अंतर्गत समता का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, प्राण और देहिक स्वतंत्रता का अधिकार, शोषण के विरूद्ध अधिकार, धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार, संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार तथा संवैधानिक उपचारों का अधिकार प्रमुख है। राज्य के नीति निदेशक तत्व राज्य के नीति बनाते समय मार्गदर्शन का कार्य करते हैं। ये तत्व आधुनिक प्रजांतत्र के लिए व्यापक राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं।

इसके साथ ही भारतीय संविधान में 42वें संविधान संशोधन के अंतर्गत मौलिक कर्तव्य को भी जोड़ा गया है।

9. कल्याणकारी राज्य की स्थापना का आदर्श– भारत का संविधान लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिए प्रतिबद्ध है। भारतीय संविधान निर्माता स्पष्ट रूप से यह चाहते थे कि भारत की केन्द्रीय और राज्य सरकारें भारतीय नागरिकों का सर्वांगीण विकास करेंगी और समाज में सामाजिक–आर्थिक समानता स्थापित करेंगी।

2. भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों का विवेचना करें।

Discuss the fundamental Rights given by the Indian Constitution.

अधिकार व्यक्ति के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है। मौलिक अधिकार प्रजातंत्रीय समाज में जीवन की वे अनिवार्य परिस्थितियां हैं, जिनके बिना कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास नहीं कर सकता। प्रो0 लास्की के अनुसार अधिकार सामाजिक जीवन की शर्तें हैं, जिनके बिना कोई व्यक्ति अपने जीवन का श्रेष्ठतम पक्ष विकसित नहीं कर सकता है।

बी0 एन0 जोशी ने इस संदर्भ में लिखा है कि प्रजातंत्रीय देश में मौलिक अधिकार सामाजिक धार्मिक और नागरिक जीवन के प्रभावोत्पादक उपयोग के एक मात्र साधन हैं। इन अधिकारों के बिना प्रजातंत्रात्मक सिद्धांत लागू नहीं हो सकते और सदैव बहुमत के अत्याचार का भय बना रहता है। भारतीय संविधान के भाग –3 में अनुच्छेद 12 से 35 तक नागरिकों के मौलिक अधिकार का उल्लेख किया गया है।

दुर्गा दास बसु के अनुसार मौलिक अधिकारों को मौलिक इसलिए कहा जाता है

क्योंकि, सर्वप्रथम, सामान्य अधिकार व्यवस्थापिका द्वारा या विधान की सामान्य प्रक्रिया द्वारा संशोधित किये जा सकते हैं। मौलिक अधिकार को केवल संविधान द्वारा निर्दिष्ट प्रक्रिया द्वारा ही संशोधित किया जा सकता है।

द्वितीय, मौलिक अधिकार देश के मौलिक कानूनों द्वारा प्रत्याभूत होते हैं।

तृतीय, राज्य का कोई भी अंग– कार्यपालिका, विधायिका या न्यायपालिका, इन अधिकारों के विपरीत कोई कार्यवाही नहीं कर सकता, उसका कोई कार्य जो इन अधिकारों का उल्लंघन करत है, अवैध होगा।

चतुर्थ, यह सरकार के साथ–साथ व्यक्ति या नागरीक भी दूसरों के अधिकारों का उल्लंघन नहीं कर सकता है।

पंचम, ये प्रकृति प्रदत्त न होकर संविधान की देन है। अतः यह निरपेक्ष अधिकार नहीं बल्कि प्रतिबंधयुक्त है। इस प्रकार संविधान द्वारा प्रदत्त तथा संरक्षित होने के कारण इसे मौलिक अधिकार कहा गया है।

मौलिक अधिकार की विशेषताएँ (Features of Fundamental Rights)

मूल अधिकार वैदिक काल से इस देश के लोगों द्वारा संजोए गये आधारभूत मूल्यों का समुच्चय है, जो व्यक्ति की गरिमा की रक्षा करने तथा ऐसी दशाएँ उत्पन्न करने के लिए उपयुक्त है, जिनमें प्रत्येक मानव अपने व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास कर सकता है।

यह विभिन्न ऐतिहासिक घटनाएँ जैसे फ्रांस की क्रांति, 1789 तथा अमेरिका के बिल ऑफ राईट, 1689 आदि से प्रभावित तथा सवंर्द्धित है। यह संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकार के सार्वभौमिक घोषणा के सार्वमान्य धारणा के अनुरूप भी है। संक्षेप में मौलिक अधिकारों की विशेषताएँ निम्नलिखित है–

प्रथम, मौलिक अधिकारों का स्वरूप एवं क्षेत्र विस्तृत एवं व्यापक है।

द्वितीय, ये असीमित नहीं होते हैं। सामाजिक हित लोक व्यवस्था एवं सुरक्षा के परिप्रेक्ष्य में इन पर उचित प्रतिबंध लगाये जा सकते हैं।

तृतीय, ये न्यायालय में न्याय योग्य होते हैं। मौलिक अधिकार के उल्लंघन पर अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत पीड़ित व्यक्ति न्यायालय की शरण ले सकता है।

चतुर्थ, मौलिक अधिकार निलंबित भी किये जा सकते हैं। 44 वें संशोधन के पश्चात् अनुच्छेद 20 एवं 21 को छोड़कर अन्य मौलिक अधिकारों को राष्ट्रीय आपात के दौरान स्थगित किया जा सकता है।

पंचम, ये अधिकार केन्द्र व राज्य सरकारों की शक्तियों पर भी सीमाएं लगाते हैं।

षष्ठम्, मौलिक अधिकारों के भाग में प्राकृतिक एव अगणित अधिकारों के लिए कोई स्थान नहीं है।

सप्तम, अधिकारों का स्वरूप नकारात्मक और सकारात्मक दोनों है।

अष्टम, मौलिक अधिकार मुख्यतः भारतीय नागरिकों के लिए है परन्तु कुछ ऐसे मूल अधिकार भी है जो सभी व्यक्तियों के लिए है चाहे व नागरिक हो या विदेशी । जैसे 14, 20, 21, 23, 25, 27, 28 आदि.

नवम्, मौलिक अधिकार संशोध्य भी है मौलिक अधिकारों को अनुच्छेद 368 में दी गई कार्य विधि द्वारा संशोधित किया जा सकता है।

दशम्, मौलिक अधिकार का प्रभाव सरकार एवं सरकारी संस्थाओं के अतिरिक्त गैर–सरकारी व्यक्तियों और संस्थाओं पर भी होता है।

भारतीय संविधान में वर्णित मौलिक अधिकार (Fundamental Rights granted by the constitution)

भारतीय संविधान के तीसरे भाग में धारा 12 से लेकर धारा 35 तक में नागरिकों के मौलिक अधिकारों का विस्तृत विवरण है। भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों का वर्णन जितने विस्तार के साथ किया गया है, उतना संसार के किसी भी अन्य लिखित संघात्मक संविधान में नहीं किया गया है।

संविधान द्वारा नागरिकों को जो मौलिक अधिकार प्रदान किये गये हैं उसके क्षेत्राधिकार काल और उसकी रक्षा से संबधित उपबंधों को सामान्य उपबंधों की संज्ञा दी गई है। संविधान के 12 वें एव 13वें अनुच्छेद में सामान्य उपबंधो की चर्चा है।

अनुच्छेद 12 मे राज्य की परिभाषा की गई है। राज्य के अर्न्तगत (1) भारत सरकार तथा संसद (2) प्रत्येक राज्य की सरकार और विधानमंडल (3) भारत के राज्य क्षेत्र के भीतर या भारत सरकार के नियंत्रण के अधीन सभी स्थानीय प्राधिकारी तथा (4) अन्य प्राधिकारी शामिल हैं।

अनुच्छेद 13 के द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि मौलिक अधिकारों से असंगत सभी विधियाँ, चाहे वह संविधान निर्माण से पहले की हो या बाद की, असंवैधानिक होंगी। इस आधार पर न्यायालयों को न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार प्राप्त हो जाता है।

संविधान में पहले सात प्रकार के मौलिक अधिकारों का उल्लेख था किंतु संविधान के 44 वें संशोधन द्वारा सम्पति के मौलिक अधिकार (31) को भाग–12 के अनु0 ''300–ए'' के रूप मे हस्तांतरित करके उसे कानूनी अधिकार बनाये जाने के बाद अब भाग –3 में केवल 6 मौलिक अधिकार हैं।

1. समता का अधिकार. (Article 14-18)

2. स्वतंत्रता का अधिकार (Article 19-22)

3. शोषण के विरूद्ध अधिकार (Ariticle 23-24)

4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (Article 25-28)

5. सांस्कृतिक और शैक्षणिक का अधिकार (Article 29-30)

6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार (Article 32)

पहला, समता का अधिकार (Article 14-18) – संविधान के अनुच्छेद 14 से 18 तक समता का अधिकार की चर्चा है–

कानून के समक्ष समानता – अनुच्छेद 14 के अनुसार भारत के राज्य क्षेत्र में राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या कानून के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।

इस अनुच्छेद के प्रथम भाग के शब्द 'कानून के समक्ष समानता' ब्रिटीश सामान्य विधि की देन है और इसके द्वारा राज्य पर बंधन लगाया गया है कि वह सभी व्यक्तियों के लिए एक समान कानून बनायेगा तथा उन्हें एक समान लागू करेगा।

कानून का समान संरक्षण यह वाक्य अमेरिकी संविधान से लिया गया है और इसका तात्पर्य यह है कि अपने अधिकारों की रक्षा के लिए प्रत्येक व्यक्ति समान रूप से न्यायालय की शरण ले सकता है।

राष्ट्रपति और राज्यपाल के कार्यो के प्रति समान विधि का अधिकार लागू नहीं होता है।

इसके साथ ही साथ कानून के समक्ष समता का तात्पर्य यह नहीं है कि औचित्यपूर्ण आधार पर और कानून के द्वारा मान्य किसी भेदभाव की भी व्यवस्था नहीं की जा सकती है। यदि कानून कर लगाने के सबंध मे धनी और गरीब में और सुविधाएँ प्रदान करने में स्त्रियों और पुरूषों में भेदभाव करता है इसे कानून के समक्ष समानता का उल्लंघन नहीं कहा जा सकता है।

भेदभाव का निषेध – अनुच्छेद 15 के अनुसार राज्य, धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म–स्थान आदि के आधार पर नागरिकों के प्रति जीवन के किसी क्षेत्र में भेदभाव नहीं करेगा। यह अधिकार केवल भारतीय नागरिकों को ही प्राप्त है।

इस अनुच्छेद में ही आगे यह व्यवस्था किया गया है कि (i) इस धारा की कोई बात राज्य को महिलाओं और बच्चों को कोई सुविधा देने से नहीं रोकेगी।

(ii). पिछड़े वर्गो, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के उत्थान के लिए राज्य विशेष प्रकार की व्यवस्था कर सकता है।

राजकीय रोजगार या नौकरी प्राप्त करने में समान अवसर – अनुच्छेद 16 के अनुसार सब नागरिकों को सरकारी पदों पर नियुक्ति के समान अवसर प्राप्त होंगे और इस संबंध में केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर सरकारी नौकरी या पद प्रदान करने में कोई भेदभाव नहीं किया जायेगा। इसके अन्तर्गत राज्य को यह अधिकार है कि वह इसके लिए आवश्यक अर्हता आदि निर्धारित करें।

अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत राज्यों के अन्य पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करने का अधिकार है। 1990 ई0 में इसी शक्ति का प्रयोग करके ओबीसी के लिए सरकारी सेवाओं मे 27% आरक्षण देने का वी0 पी0 सिंह सरकार ने निर्णय लिया, जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने उचित ठहराया।

अस्पृश्यता का निषेध – अनुच्छेद 17 के अनुसार शताब्दियों से चली आ रही छुआछुत प्रथा का न केवल अंत कर दिया गया बल्कि इसका किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध किया गया है।

1955 मे अस्पृश्यता अपराध अधिनियम पारित करके इसे अपराध घोषित किया गया है। इसे पुनः 1976 तथा 1989 में संशोधित करके कठोर बना दिया गया है।

उपाधियो का अंत – अनुच्छेद 18 के अन्तरीत शौर्य, समाजसेवा अथवा विद्या संबधी उपाधियों को छोड़कर अन्य उपाधियों का अंत कर दिया गया है। हालांकि अनुच्छेद 18(1) के अन्तर्गत सैनिक या शैक्षिक विशिष्टयों के संदर्भ में उसके प्रयोग की छूट दी गयी है।

दूसरा, स्वतंत्रता का अधिकार – भारतीय संविधान का उद्देश्य विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वाधीनता सुनिश्चित करना है। इस संबध में यह अधिकार काफी महत्वपूर्ण है। अनुच्छेद 19 से 22 तक इसकी चर्चा की गयी है।

स्वतंत्रता का अधिकार – अनुच्छेद 19 के अन्तर्गत मूलतः सात प्रकार की स्वतंत्रता का उपबंध था। किंतु 44 वें संवैधानिक संशोधन के द्वारा अनुच्छेद 19(च) को, जो कि संपति प्राप्त करने, रखने व बेचने के अधिकार से संबंधित था, मौलिक अधिकार के भाग से निकाल कर उसे

कानूनी अधिकार का दर्जा दिया गया। इस प्रकार 19(1) के अन्तर्गत नागरिकों को छह प्रकार की स्वतंत्रताएँ प्राप्त हैं। ये है–

(1) वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता
(2) शांतिपूर्ण एवं निरायुद्ध सम्मेलन
(3) संस्था एवं संघ बनना
(4) भारतीय राज्यक्षेत्र में अबाध संक्षरण की स्वतंत्रता
(5) भारतीय राज्य क्षेत्र मे किसी भाग में निवास करने तथा बसने की स्वतंत्रता
(6) सम्पति प्राप्त करने, उसे बनाये रखने तथा बेंचने की स्वतंत्रता (44वें संशोधन द्वारा निरस्त)
(7) कोई वृति, व्यापार , आजीविका या कारोबार की स्वतंत्रता

अपराध की दोष सिद्धि के विषय में संरक्षण – अनुच्छेद 20 के अनुसार किसी भी व्यक्ति को किसी अपराध के लिए सिवाय उस कानून को तोड़ने पर जो कि तोड़े जाने के समय लागू हो सजा नहीं दी जायेगी और न ही उसे अधिक दंड दिया जायेगा जो कि अपराध के समय लागू कानुन के अन्तर्गत दिया जा सकता है। किसी व्यक्ति को एक अपराध के लिए दो बार सजा नहीं दी जा सकती । किसी अभियुक्त को अपने विरूद्ध गवाही देने के लिए के बाध्य नहीं किया जा सकता।

प्राण एवं वैदिक स्वतंत्रता का संरक्षण – अनुच्छेद 21 के अनुसार, नागरिकों को प्राण एवं वैदिक स्वतंत्रता प्रदान की गई है। इसमें यह उपबंध किया गया है किसी व्यक्ति को विधि के अनुसार ही प्राण एवं वैदिक स्वतंत्रता से वंचित किया जा सकता है, अन्यथा नहीं ।

93 वें संविधान संशोधन प्रांरम्भिक शिक्षा का मौलिक अधिकार बनाने वाले यह विधेयक को राष्ट्रपति डॉ0 ए0 पी0 जे0 अब्दुल कलाम ने 13 दिसम्बर 2002 को प्रदान की। इस विधेयक मे 6–14 वर्ष के उम्र के सभी बच्चों के अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा का प्रविधान किया गया है।

बंदीकरण की अवस्था में संरक्षण – अनुच्छेद 22 के अन्तर्गत व्यक्ति की मनमानी गिरफ्तारी और नजनबंदी का निषेध किया गया हैं। इसमें यह कहा गया है कि

1) गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को गिरफ्तारी के तुरंत बाद उसकी गिरफ्तारी के कारणों से परिचित कराया जाय।

2) उसे अपनी पसंद की वकील से परामर्श लेने और उसके द्वारा सफाई पेश करने का अधिकार है।

3) बंदी व्यक्ति को बंदीगृह से मजिस्ट्रेट के न्यायालय तक की यात्रा के लिए आवश्यक समय निकालकर 24 घंटे के अंदर मजिस्ट्रेट के न्यायालय में उपस्थित किया जाय।

4) बिना मजिस्ट्रेट की आज्ञा के 24 घंटे से अधिक समय के लिए किसी व्यक्ति को करावास में नहीं रखा जाएगा।

निवारक निरोध – अनुच्छेद 22 को अंतर्गत प्राप्त संरक्षण शत्रु विदेशियों तथा निवारक नजरबंदी कानून के तहत नजरबंद किये गये व्यक्तियों को प्राप्त नहीं है।

संविधान में ही विधानमंडल को निवारक नजरबंदी न उपबंध करनेवाली विधि बनाने के लिए प्राधिकृत किया गया है। अतएव संसद कोई ऐसा कानून बना सकती है जिसके अन्तर्गत राज्यों की सुरक्षा एवं लोकव्यवस्था के मद्देनजर किसी व्यक्ति को बिना कारण बताये गिरफ्तार कर कारावासित किया जा सके। ऐसे कानून के विरूद्ध व्यक्ति को दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार नहीं होगा।

अभी तक निम्नलिखित Preventive Detention Act बनाये गये है–

(1. Preventive dendation Act, 1950, 2. Maintainance of Internal Security Act, 1971- 3. National Security Act, 1980, 4. National Security Act, 1984, 5. COFEPOSA, 1974, 6. TADA, 7. POTA, 2003)

संसद को यह शक्ति है कि वह विधि द्वारा यह निश्चित करे कि किसी व्यक्ति को अधिकतम कितनी अवधि के लिए निवारक विरोध के अधीन निरूद्ध किया जा सकता हैं।

तीसरा, शोषण के विरूद्ध अधिकार – अनुच्छेद 23 और 24 शोषण के विरूद्ध अधिकार से संबंधित है और ये व्यक्तियों को अपने स्वार्थो के लिए उपयोग करने के लिए है। ये समाज के कमजोर वर्ग को लापरवाह लोगों तथा यहाँ तक कि राज्य के द्वारा किये जा रहे शोषण से बचाने के लिए है।

बलात् श्रम का निषेध – अनुच्छेद 23 मानवों के व्यापार, बेगार तथा उसी प्रकार जबरदस्ती कराये जाने वाले परिश्रम आदि से बचाने के लिए है। बलात् कार्य कराना कानूनी दण्डनीय

जुर्म है। लेकिन यह अनुच्छेद जन–सामान्य के हित के लिए अनिवार्य सेवाओं की दृष्टि से राज्य को रोक नहीं सकता। परन्तु जिस समय राज्य इस प्रणाली की सेवाओं के लिए दबाब डालता है तो वह इस दृष्टि से धर्म, नस्ल, जाति या वर्ग के या इनमें से किसी के आधार पर भेदभाव नहीं कर सकता है।

बालश्रम का निषेध – अनुच्छेद 24 के अन्तर्गत बच्चों के शोषण को रोकने के लिए 14 वर्ष से कम उम्रवाले बच्चों को कारखानों, खानों तथा इसी प्रकार से अन्य कामों में रोजगार का निषेध करता हैं। इस प्रावधान का उल्लंघन कानूनन दण्डनीय अपराध है।

इस प्रकार के शोषण को खत्म करने के उद्देश्य से सरकार ने बंधुआ मजदूर (उन्मूलन) अधिनियम, 1976 पारित किया था। जिसके अन्तर्गत दासप्रथा को पूरी तरह समाप्त कर दिया गया है।

चतुर्थ, धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 25 से लेकर 28 तक नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रताएँ प्रदान की गई है –

अन्तःकरण की स्वतंत्रता – अनुच्छेद 25 के अन्तर्गत सभी व्यक्तियों को अन्तःकरण की स्वतंत्रता के साथ धर्म में विश्वास रखने, धार्मिक कार्य करने तथा धर्म का प्रचार करने की स्वतंत्रता है। सिखों द्वारा कृपाण धारण करना और लेकर चलना धार्मिक स्वतंत्रता का अंग माना गया है।

धार्मिक मामलों का प्रबंध करने की स्वतंत्रता – अनुच्छेद 26 के अर्न्तगत सभी व्यक्ति को धार्मिक मामलों का प्रबंध करने की स्वतंत्रता देता है। यह अनु0 25 तक ही उपसिद्धांत मात्र है।

धार्मिक व्यय पर निश्चित धन पर कर की अदायगी से छूट – अनुच्छेद 27 के अन्तर्गत किसी विशेष धर्म के विकास के लिए करों की अदायगी से छुट प्रदान की गई है। (राज्य किसी भी व्यक्ति को ऐसे कर देने के लिए बाध्य नहीं कर सकता है, जिसकी आय किसी विशेष धर्म अथवा धार्मिक सम्प्रदाय के उन्नति या पोषण में व्यय करने के लिए विशेष रूप से निश्चित कर दी गई हो।)

राजकीय शिक्षण संस्थाओं मे धार्मिक शिक्षा पर प्रतिबंध – अनुच्छेद 28 के अन्तर्गत यह व्यवस्था की गई है कि राजकीय निधि से संचालित किसी भी शिक्षण संस्थाओं में किसी

प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी। हमारे संविधान ने राजधर्म नहीं है और राज्य किसी धर्म को विशेष रूप से संरक्षण नहीं दे सकता।

धर्म के अनुसरण व प्रचार करने में किस अन्य धर्म का विरोध करने व धर्म–परिवर्तन शामिल नहीं है तथा लोकव्यवस्था, नैतिकता एवं स्वास्थ्य व सामाजिक हित में राज्य धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप कर सकता है।

पाँचवा, सांस्कृतिक एवं शिक्षा संबंधी अधिकार

संविधान के अनुच्छेद 29 एवं 30 में भारत के सभी नागरिकों को संस्कृति एवं शिक्षा संबंधी स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है। संविधान के अनुच्छेद 29 अन्तर्गत भारतीय जनता के प्रत्येक वर्ग को अपनी भाषा, लिपि अथवा संस्कृति को सुरक्षित रखने का पूरा अधिकार दिया गया है। अनुच्छेद 30 धर्म और भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रूचि की शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना एवं प्रशासन का अधिकार देता है। यह भी व्यवस्था की गई है कि शिक्षण संस्थाओं को अनुदान देने में राज्य इस आधार पर भेदभाव नहीं करेगा कि वे धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक वर्ग के अधीन है।

इस प्रकार ये दोनों अनुच्छेद सांस्कृतिक एवं धार्मिक सहिष्णुता तथा सामाजिक समरसता के प्रतीक हैं।

छठा, संवैधानिक उपचारों का अधिकार

संविधान का अनुच्छेद 32 नागरिकों को संवैधानिक उपचारों का अधिकार देता है। इस अधिकार अथवा अनुच्छेद की प्रभावोत्पादकता के मद्देनजर ही डॉ0 अम्बेदकर ने इसे ''संविधानिक का हृदय एवं आत्मा'' कहा है। संवैधानिक उपचारों के अधिकार का निहितार्थ है कि यदि किसी व्यक्ति के मूल अधिकारों का उल्लंघन होता है तो सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय क्रमशः 32 एवं 226 के अन्तर्गत असके अधिकारों की रक्षा करते हैं। इसे हेतु ये पाँच प्रकार के निर्देश या रिट जारी कर सकते हैं –

बंदी प्रत्यक्षीकरण (Writ of Habeaus Corpus) - इस रिट का स्थूल सा अभिप्राय है कि शरीर प्राप्त करना। दूसरे शब्दों में इस लेख के अन्तर्गत न्यायालय संबंधित अधिकारियों को यह आदेश देता है कि बंदी बनाये गये व्यक्ति को न्यायालय के समक्ष सशरीर प्रस्तुत करे। यदि न्यायालय उपलब्ध या पेश किए गये तथ्यों के आधार पर उस व्यक्ति को अवैध रूप से

बंदी बनाये जाने की बात ही महसूस करता है तो उसे रिहा करने का आदेश जारी कर सकता है।

परमादेश लेख (Writ of Mandamus)- इस लेख का अभिप्राय है– आज्ञा देना। इस आज्ञा पत्र द्वारा न्यायालय किसी अधिकारी को अपने कर्तव्यों का पालन करने हेतु बाध्य करता है। इसके द्वारा राज्य के सरकारी अधिकारियों से ऐसे कार्य करवाये जा सकते हैं। जिनको वे किसी कारणवश न कर रहे हो तथा जिनके न किये जाने से किसी नागरिक के मूल अधिकारों का उल्लंघन होता हो। दूसरे शब्दों में, इसका निहितार्थ है कि ऐसे कार्य करने का अधिकार अमुक अधिकारी को कानूनी रूप से प्राप्त है। कोई प्रशासनिक या न्यायिक अधिकारी इस शक्ति का प्रयोग करने से इंकार करता है तो उसे लोक–कर्त्तव्य से विमुख मान लिया जाता है और तब ''परमादेश लेख'' उसके विरूद्ध जारी किया जाता है।

प्रतिषेध लेख (writ of Prohibition)- इस लेख का अर्थ है – रोकना। यह आदेश उच्चतर न्यायालय द्वारा निम्न न्यायालयों को जारी किया जाता है। इसके अन्तर्गत उच्चतर न्यायालय अधीनस्थ न्यायालय को यह आदेश देता है कि वह अमुख कार्य जो उसके अधिकार क्षेत्र से बाहर है पर कार्यवाही रोक दे। दूसरे शब्दों में, यह आज्ञा पत्र का प्रयोग अधीनस्थ न्यायालयों को उसकी सीमाएँ बताने के लिए भी किया जाता है।

उत्प्रेषण लेख (write of certiorari)- इस लेख का निहितार्थ है– अच्छी तरह सूचित करें। प्रतिषेध व उत्प्रेषण दोने लेखों का आधार एक है। प्रतिषेध लेख उच्चतर न्यायालय द्वारा अधीनस्थ न्यायालयों को उसके अधिकार प्रयोग के पूर्व जारी किया जाता है, जबकि उत्प्रेषण लेख अधिकार प्रयोग के पश्चात् जारी किया जाता है। इसका प्रयोग मामलों को निम्न न्यायालय से उच्च न्यायालय में मँगवाने के लिए किया जाता है।

जब कोई न्यायाधिकरण बिना किसी अधिकारिता के या उसका उल्लंघन करके कार्य करता है और कोई अवैध आदेश जारी करता है तो उत्प्रेषण के रिट द्वारा उसे रद्द किया जा सकता है।

अधिकार–पृच्छा लेख (write of Quo-Warranto)- इस लेख का आशय है– किसके आदेश से या किस अधिकार से। वास्तव में यह एक कार्यवाही है जिसके द्वारा न्यायालय लोक पद पर किसी व्यक्ति के दावे के औचित्य की जांच पड़ताल करता है और यदि उसका दावा वैधता पर आधारित नहीं है तो उसे पद से हटा दिया जाता है।

इस लेख को जारी करने के लिए निम्न बातें आवश्यक है–

(क) लोक पद हो, जिसका कानूनी आधार हो,

(ख) पद पर कोई व्यक्ति आसीन या नियुक्त हो,

(ग) ऐसी नियुक्ति में कानून या संविधान का उल्लंघन हुआ हो।

इस प्रकार इस लेख का मूल आधार यह है कि कोई अवैध या गलत दावेदार किसी लोकपद पर आसीन न हो।

संवैधानिक उपचारों के अन्तर्गत सर्वोच्च न्यायालय में तथा उच्च न्यायालय में क्रमशः अनु0 32 तथा 226 के तहत रिट दायर किया जा सकता है। इनके अधिकार क्षेत्रों में भी अंतर पाये गये हैं, जो निम्नलिखित है –

प्रथम, सर्वोच्च न्यायालय केवल मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होने की स्थिति में रिट जारी करता है जबकि उच्च न्यायालय केवल मौलिक अधिकारों को कार्यान्वित करने के लिए ही नहीं बल्कि किसी भी क्षति अथवा अवैधता के उपचार हेतु रिट जारी कर सकता है। इस संदर्भ में उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र अधिक व्यापक है।

द्वितीय, अनुच्छेद 32 सर्वोच्च न्यायालय पर रिट जारी करने का कर्त्तव्य डालता है जबकि उच्च न्यायालयों पर अनुच्छेद 226 में किसी प्रकार की बाध्यता नहीं है।

तृतीय, सर्वोच्च न्यायलय का अधिकार क्षेत्र पूरा देश है जबकि उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र उसके राज्य विशेष और संघ शासित प्रदेश की सीमाओं तक सीमित है।

मूल अधिकारों का निलम्बन

भारतीय संविधान के अन्तर्गत प्रदत मूलभूत अधिकारों को आपातकाल में भारत की सुरक्षा या इसके किसी भूखण्ड की सुरक्षा या वाह्य आक्रमण के संदर्भ में राष्ट्रपति के द्वारा निलंबन किया जा सकता है। राष्ट्रपति को मूलभूत अधिकारों को निलंबित करने के लिए विशेष तथा निश्चित आदेश देने पड़ते हैं और इस आदेशों को संसद के समक्ष शीघ्रातिशीघ्र रखना पडता है। भारत का राष्ट्रपति इन मूलभूत अधिकारों को लागू करने के लिए अदालत की शरण में जाने के अधिकार को निलंबित कर सकता है। मौलिक अधिकारों में केवल अनुच्छेद 20, 21 को निलम्बित नहीं किया जा सकता है।

मौलिक अधिकारों का मूल्यांकन

विद्वानों के मध्य संविधान के द्वारा प्रदत मूल अधिकारों के महत्व के संबध में मतभेद विद्यमान हैं। कुछ आलोचकों का कहना है कि संविधान कुछ महत्वपूर्ण मौलिक अधिकारों जैसे काम पाने का अधिकार, सूचना पाने का अधिकार आदि का जिक्र भी नहीं करता। दूसरी तरफ यह तर्क किया जाता है कि भारतीय संविधान द्वारा स्वीकृत मौलिक अधिकार अपेक्षाकृत अधिक वास्तविक है यद्यपि वे असीमित नहीं है।

मूलभूत अधिकारों की निम्नलिखित दृष्टियों से आलोचना की गई है–

प्रथम, कुछ आर्थिक तथा सामाजिक अधिकार जो प्रगतिशील प्रजातांत्रिक देशों में उपलब्ध हैं, वे हमारे मूलभूत अधिकारों की सूची में नहीं है। यह आरोप निराधार नहीं है परन्तु देश के सीमित साधनों को ध्यान रखते हुए सविधान निर्माताओं ने यह ठीक ही समझा कि उन्हें संविधान में शामिल किया जाय। इन अधिकारों का केवल संविधान में शामिल करना बिना उनके व्यावहारिक रूप की व्यवस्था किये हुए संभवतः संविधान का मजाक उड़ाने के समान होता, धोखा देना होता। इसीलिए इन अधिकारों को नीतिनिर्देशक सिद्धांतों में सम्मिलित किया गया था।

द्वितीय, कुछ मूलभूत अधिकारों को इतने अधिक प्रतिबंधों तथा सीमाओं से बाधित किया गया है कि वे करीब–करीब अप्रभावी हो जाते हैं।

तृतीय, मूलभूत अधिकारों की रक्षा के उपाय अत्यन्त खर्चीले हैं और सामान्य नागरिकों की शक्ति से परे हैं। परिणामतः केवल सम्पन्न लोग ही मूलभूत अधिकारों के उल्लंघन के विरूद्ध कानूनी रक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

यह कहा जा सकता है कि संविधान द्वारा प्रदत्त मूलभूत अधिकार बहुत विस्तृत है किन्तु ये प्रतिबंधों से बाधित हैं। अधिकतर आलोचना इन्हीं प्रतिबंधों के कारण की गई हैं। किन्तु यह भी सच है किसी भी समाज में पूर्ण तथा असीमित अधिकार संभव नहीं है। कुछ प्रतिबंध तो आवश्यक है जिससे सभी नागरिकों को यह अधिकार प्राप्त हो सके। न्यायपालिका ने इस दृष्टि से उत्कृष्ट भूमिका अदा की है। मूलभूत अधिकार उसी के कारण वास्तविक बन गए हैं।